Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 2 | Issue 4 | (Oct – Dec 2025)

बल्लभ डोभाल की कहानियों में वृद्ध जीवन की अभिव्यक्ति

कोमल
शोधार्थी, हिंदी विभाग
हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड- 246174

शोध सार

वृद्धावस्था जीवन का वह समय है। जब अनुभवों का सूर्य अपनी स्वर्णिम लालिमा से वर्तमान को आलोकित करता हुआ प्रतीत होता है और उनकी ज्ञान की शीतल छाया भावी पीढ़ी के लिए पथ-प्रदर्शिका बनकर जीवन में उचित-अनुचित का मार्ग प्रशस्थ कराती जाती है। इस समय जब परंपराओं का प्रहरी और जीवन के अनमोल सबक का संवाहक अपने जीवनानुभवों को अपनी अगली पीढ़ी को हस्तांतरित करने की स्थिति में होता है, तब यह प्रश्न उठता है कि उसका वह अनुभव भावी पीढ़ी के लिए कितना उपयोगी होगा? समाज का एक क्रूर नियम है कि किसी की उपयोगिता समाप्त होते ही उसकी उपेक्षा होने लगती है, यही स्थिति समाज में बुजुर्गों की भी रही है। आधुनिक युग के बदलते सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य में बुजुर्ग व्यक्तियों की उपेक्षा, उनका अकेलापन और असुरक्षा की छाया में जीवनयापन करने की उनकी विवशता ने उनको भी हाशिये पर लाकर खड़ा कर दिया है। इस विसंगति का प्रतिबिंब साहित्य में भी दिखायी देता है। हिंदी साहित्य वृद्धों की समस्याओं को लेकर जागरूक दिखायी देता है। विशेषकर प्रेमचंद इस दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण साहित्यकार रहे हैं। उनके कथासाहित्य में वृद्ध विमर्श उभरता हुआ दिखायी देता है। प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' कहानी में एक वृद्धा की मार्मिक कहानी व्यक्त हुई है। वहीं ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी में पिता-पुत्र के संबंधों में पीढ़ीगत अंतराल को देखा जा सकता है। जिसमें दोनों ही अपने-अपने स्तर पर सही होते हुए भी एक-दूसरे के विपरीत दिखायी देते हैं। नरेंद्र कोहली की 'शटल' कहानी में बच्चे माता-पिता को अलग-अलग करके अपने-अपने साथ ले जाते हैं। इस कहानी में वृद्धावस्था में अपनी इच्छा को घोटकर बच्चों की खुशी के प्रति वृद्ध माता-पिता के समर्पण के भाव का उल्लेख हुआ है। भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' कहानी में वृद्ध माँ को बेकार वस्तु की भाँति घर में छुपाने का प्रयास चलता है ताकि माँ चीफ के नजरों में न दिखायी दे, परन्तु माँ अनपढ़ होते हुए भी फुलकारी की कला में निपूर्ण होती है, जिससे चीफ प्रभावित होकर (शामनाथ) का प्रमोशन करता है। इस कहानी में पारिवारिक मूल्यों की गिरावट को देखा जा सकता है। वहीं ऊषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी में सेवानिवृत्त वृद्ध की समस्याओं का वर्णन किया गया है। इस कहानी का नायक नौकरी से रिटायर होने के पश्चात् परिवार में अपनी जगह तलाशता दिखायी देता है, जिस कारण उसे दूसरी नौकरी की तलास करनी पड़ती है। इस प्रकार की अनेक कहानियाँ हिंदी साहित्य में मार्मिक ढंग से लिखी गयी हैं जो वृद्धों के विभिन्न पक्षों व समस्याओं को पाठक तक संप्रेषित करती हैं। वृद्ध जो कभी अपने परिवार और समाज को दिशाबोध कराते थे, आज मौन रहने को मजबूर दिखायी देते हैं। यह शोध पत्र समाज और परिवार के बदलते ताने-बाने को वरिष्ठ साहित्यकार बल्लभ डोभाल के कथा साहित्य के आलोक में वृद्धों की स्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जो ग्रामीण और शहरी परिवेश के साथ-साथ विविध पारिवारिक ढाँचों में उनकी भूमिका और चुनौतियों को दृष्टिगत करता दिखाई देता है।

बीज शब्द: समाज, वृद्ध, किसान, स्त्री, सेवानिवृत्त, विस्थापित, परिवार में वृद्ध, ग्रामीण वृद्ध, शहरी वृद्ध, अशिक्षित वृद्ध, शिक्षित वृद्ध ।

मूल आलेख

वृद्धावस्था जीवन की वह नैसर्गिक स्थिति है। जिसमें मनुष्य का शरीर जन्म लेकर अपनी बाल,किशोर, युवावस्था पार

कर वृद्धावस्था तक पहुंचता है। इन अवस्थाओं की क्रमिक यात्रा में मनुष्य की शक्तियों का विकास होकर धीरे-धीरे उनका ह्रास होना सुनिश्चित है, क्योकि जीवन मृत्यु के बंधन में बंधे इस भौतिक शरीर की अपनी एक सीमा है। वृद्धावस्था में मनुष्य भले ही शारीरिक रूप से अक्षम दिखायी देता हो; किंतु उसके पास सुदीर्घ जीवन का विराट अनुभव संचित होता है, जो भावी पीढ़ी के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। समय परिवर्तनशील है। समय के साथ-साथ सामाजिक स्थितियों में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। ऐसे में ये समाज के लिए कितने उपयोगी होंगे? इसका उत्तर तो समय और परिस्थितियाँ ही देगी, किंतु इतना तय है कि वृद्धावस्था में संचित यह जीवनानुभव उचितानुचित का विवेक व आदर्श जीवन का संस्कार अवश्य देता है। इस दृष्टि से वृद्धों का संरक्षण नितांत आवश्यक है। भारतीय चिंतन में जन्मदाता माता-पिता को ईश्वर से श्रेष्ठ और आदरणीय मानकर 'मातृ देवों भव', 'पितृ देवों भव' कहकर वेद वंदना करते हैं। समाज में वृद्धों का संरक्षण एक संस्कृति का संरक्षण है। इसलिए ये सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षक और परंपराओं के जीवंत प्रतीक हैं। उनकी वाणी में अपनी मिट्टी की सौंधी सुगंध और जीवन का गहन अनुभव समाहित रहता है। फिर भी आधुनिकता की आँधी ने इस परंपरागत सम्मान को झकझोर दिया है। वृद्ध किसान जो जीवन भर खेतों की उर्वर माटी से जुड़ा रहा, जब शारीरिक क्षीणता के कारण हल की मूठ थामने में असमर्थ हो जाता है, तो वही किसान अपने ही घर में उपेक्षा का दंश झेलने को मजबूर हो जाता है। जीवन का एक समय ऐसा भी था, जब इनके अनुभव घर तथा खेती के निर्णयों को दिशा देते रहे थे, किंतु नई पीढ़ी व आधुनिकता के सामने उनकी आवाज़ धीमी पड़ने लगती है। कई बार उन्हें परिवार में 'अनुपयोगी' ठहरा दिया जाता है। परिवार का अपने प्रति उपेक्षा के कारण उनके मन में गहरी ठेस पहुँचने लगती है। बुजुर्ग व्यक्ति अपने आगे की पीढ़ी के प्रति वात्सल्य से भरा होता है और हर तरीके से उनका कल्याण चाहता हैं। बुजुर्ग व्यक्ति के इसी वात्सल्यभाव को डोभाल जी की कहानी 'वही एक अंत' में रेखांकित करते हुए कहा गया हैं- "उस आदमी की सूरत आँखों के सामने है। वात्सल्य से पसीजा हुआ उसका चेहरा और वाणी में सुख की अनुभूतियों का छलकाव।"[1]

वृद्धों के जीवन में अपने व्यावसायिक संघर्ष रहे है, ग्रामीण अंचलों में वृद्ध अपने जगह जमींन से आत्मीयता से जुड़े रहते है। उनकी संताने रोजगार हेतु प्राथमिक व्यवसायों को छोड़कर द्वितीयक, तृतीयक व्यवसायों में संलग्न हो जाते हैं। परिणाम स्वरूप ग्रामीण अंचलों में पशुपालन, खेती, तथा अन्य हस्तकला जैसे प्राथमिक व्यवसायों में वृद्धजन ही संलग्न हो पाते हैं। वहीं निर्माण कार्यों में संलग्न वृद्ध श्रमिक की स्थिति हृदयविदारक रही है। शारीरिक शक्ति के ह्रास के साथ ही इनके आजीविका के द्वार बंद होने लगते है। इन्हें अपने परिवार के अन्य सदस्यों पर आश्रित रहना पड़ता है। बिना किसी सामाजिक सुरक्षा के वह अभाव और उपेक्षा के बीच जीवन जीने को बाध्य रह जाते हैं। उनकी मेहनत जो कभी गाँव के विकास का आधार मानी जाती थी, अब केवल स्मृतियों में सिमटकर रह जाती है। डोभाल जी की कहानी 'खेत में कविता' पहाड़ के व्यक्तियों की परिश्रमशीलता को उजागर करती है, इस कहानी में पिचासी वर्ष के बासूदा हल चलाकर अपनी जीविका का निर्वहन कर रहे हैं। कथाकार, बसूदा की स्थिति का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि- "बहुत दिनों बाद जब गाँव जाना हुआ तो रास्ते वाले खेत में बासूदा को हल चलाते देख लिया। पिचासी वर्ष पार कर चुके बासूदा को मजबूती के साथ हल की मूठ थामे देख पहली प्रतिक्रिया यही हुई कि पहाड़ के वातावरण और हवा-पानी का ही यह कमाल है जो मरते दम तक किसी को हारमान नहीं होने देता।"[2]

ग्रामीण वृद्धाएँ जो जीवन भर घर और खेतों के बीच संतुलन साधती आयी थी। वह भी वृद्धावस्था में उपेक्षा का दंश झेलने को मजबूर हो जाती हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव और पोषण की कमी उनके जीवन को और दुरुह बना देती है। उनकी आवाज़ जो कभी परिवार के लिए संगीत हुआ करती थी, अब उन्हें निर्णयों की परिधि से बाहर ठेल दिया गया है। फिर भी उनकी ममता और उनकी अनुभव की गुच्छी गाँव की गलियों में आज भी सुगंध बिखेरती नज़र आती है। परिवार में बुज़ुर्गों की उपेक्षा को डोभाल जी की कहानी 'कही-अनकही' बड़े मार्मिक ढंग से व्यक्त करती है- "गाँव की बुढ़ी औरतें जो रिश्ते में दादी या ताई लगती थीं, उनके पास कुछ देर बैठा रहा। उसी थोड़े समय में उनकी

बातें, उनके अनुभव सुनने को मिले। उन्हें प्रायः एक ही तरह की शिकायत थी। वह शिकायत भी उनके अपने बहू-बेटों के बारे में होती। उनका कहना था कि जब से बेटों के ब्याह हुए, तब से उनका मुँह देखना मुश्किल हो गया है। ऐसी मकड़ियाँ इन घरों में आई हैं कि बेटों को हमसे फिरंट कर दिया है। और तो और, एक कागज का टुकड़ा तक नहीं भेजता कोई...।"[3]

इसी प्रकार का भाव उनकी दूसरी कहानी अंतिम आवाज' सही अर्थों में व्यक्त करती हैं। माँ अपने बेटे की खुशी के लिए अपना घर-परिवेश छोड़ कर शहर में बसने जाती है और अपने परिवार का अपने प्रति उपेक्षाभाव देखकर उसका जीवन सूखता जाता है। माँ शहर में बेटे-बहु के साथ रहकर भी एकांकीपन महसूस करने लगती है। उसे परिवार द्वारा अपने घर तथा मिट्टी से वंचितकर घर के एक कोने में बीमार छोड़ दिया गया है। वह गाँव की बीती स्मृतियों को याद करके सोचती है- "जिस जगह सारा जीवन खपा दिया बचपन से लेकर अब तक जिंदगी बिता दी है, वहाँ की याद कैसे भुलाई जा सकती है। माँ सोचती है ये बच्चे कितने स्वार्थी हो गये हैं। बाप दादों से चलती हुई जगह जमीन को किस बेरहमी के साथ भूल जाना चाहते है।"[4]

माँ परिवार की संवेदनहीनता को देखकर बीमार रहने लगती है। जीवन के अंतिम क्षणों में जब उसकी अंतिम इच्छा पूछी जाती है तो माँ कहती है कि- "जानना चाहते हो तो मेरी इच्छा यही है कि तुम लोग अपने गाँव लौट जाओं। मैं जा रही हूँ, पर मेरी आत्मा पंछी बनकर घर के आंगन में झुकी हुई उस डाली पर बैठी तुम्हारा इंतजार करेगी और देखेगी कि तू आकर घर का दरवाजा खोलता है या नहीं। जिस दिन तू ऐसा करेगा उसी दिन मेरी आत्मा को शांति मिलेगी।"[5]

ये कहानी वृद्ध माँ के माध्यम से गाँव की स्मृति तथा पारिवारिक विघटन और मानवीय संवेदना की क्षीणता को व्यक्त करती है। यह कहानी आधुनिकता के दौर में उपेक्षित बुज़ुर्गों के मानसिक संघर्ष और संवेदनशून्य हो रहे परिवार की मार्मिक व्यथा को संदर्भित करती है। आधुनिकता की चकाचौंध में अकेलापन ग्रामीण तथा शहरी समाजों के वृद्धों की भिन्न-भिन्न कथाएं कहती है। आधुनिकता की चमक और जीवन की आपाधापी ने वृद्धों को भावनात्मक और सामाजिक एकांत की गहराइयों में धकेल दिया है। वहीं पर्वतीय अंचलो में पलायन के कारण पारिवारिक विघटन सबसे अधिक देखा गया है। जिस कारण दोनों ही स्थानों में बुजुर्गों की दयनीय दशा हुई है। डोभाल जी की कहानी 'घर गिरस्ती' वृद्ध काका-काकी के जीवन पर आधारित है, यहाँ पारिवारिक विस्थापन के कारण वृद्धदंपत्ति अकेलेपन व अभाव में जीवनयापन करने को मजबूर हैं, वह अपने घर में बंधे मवेशियों को ही अपनी गृहस्थी मानते है । उनके बच्चों के विषय में कथाकार का वक्तव्य है- "काकी ने क्या-क्या सपने नहीं बुने थे। एक भरपूर गिरस्ती को संभालने में तन को खपा दिया। अपना पेट काटकर बच्चो के मुँह में डाला और उसी मे संतोष मिला। सोचा था, बड़े होकर ये बच्चे सुख देंगे। तब भी मन मे किसी खास तरह के सुख की ललक नहीं थी । अपने परिवार को आँखों के सामने फलते-फूलते देखने का सुख ही माँ-बाप लेना चाहते है। लेकिन इतना भी काकी को न मिला, वह समय जब आया तब मुल्क देश में तरक्की का बिगुल बज उठा। बच्चे लोग आगे बढ़ने की दौड में कूद पड़े। अब उन्हें पीछे देखने की फुर्सत कहाँ है। कहाँ है इतना नाम कि पीछे वह जमीन छूट गई है जिसकी मिट्टी में जीवन एक अंकुर बनकर फूटा था, जिसका अन्नजल लेकर आज दौड़ लगाने के काबिल हुए है। उस धरती का किसे ख्याल है। वह तो नई जमीन की तलाश में आगे दौड़ते ही चले जा रहे हैं। हर चीज को दिल से निकालकर आगे बढ़ने की लगन लगी है।"[6]

सेवानिवृत्त वृद्धों के पास वित्तीय स्थिरता तो होती है, किंतु भावनात्मक रिक्तता उनके जीवन का सबसे बड़ा संकट बन जाता है। कार्यक्षेत्र से अवकाश प्राप्त होने के पश्चात् वे सामाजिक कटाव और परिवार की व्यस्तता में अपने लिए स्थान खोजने को तरसते हैं। उनकी उपस्थिति, जो कभी सम्मान का प्रतीक मानी जाती थी, अब कई बार परिवार में बोझ-सी प्रतीत होने लगती है। रोजगार की तलाश, बच्चों के स्थानांतरण के कारण विस्थापित वृद्धों को नए परिवेश में समायोजन की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अनजान भाषा, संस्कृति और सामाजिक संजाल का अभाव उन्हें

मानसिक अवसाद की ओर धकेलता जाता है। ऐसी ही डोभालजी की 'मकान रोग' कहानी का कथ्य भी है। लाला जी इनकम टैक्स विभाग से सेवानिवृत्त होकर देहरादून में अपना मकान बनाते है, जिसको बनाते-बनाते वह मानसिक अवसाद में चले जाते हैं, उन्हें मकान की बातों के अलावा कुछ अन्य बातें पसंद ही नहीं आती। जिस कारण लाला जी की पत्नी अपने पति के पागल हो जाने के भय से डर जाती है। वह लेखक से कहती है- "मकान जो बन गया सो...। पर अब तो इनकी चिंता है। मकान ने इन्हें तोड़ दिया है और इन्हें भी मकान के अलावा किसी से लगाव नहीं। जब देखो मकान की बात करेंगे.... सोते-जागते, खाते-पीते हर वक्त मकान सामने हो। जैसे मकान के अलावा दुनिया में कोई दूसरी चीज है ही नहीं।"[7]

इस प्रकार की कहानी सेवानिवृत्त बुजुर्गों के आंतरिक भय को दिखाता है, जिसमें वह अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए घर, गाड़ी जैसे भौतिक संसाधनों को खरीद कर उसे ही अपनी समृद्धि से जोड़ने लगते हैं। साथ ही दिखावेपन की प्रवृत्ति के कारण वह अपने सगे-संबंधियों से भी अजनबी व्यवहार करने लगते हैं। कभी-कभी परिवारों में वृद्धों का जीवन एकाकीपन की ठंडी हवाओं से घिरा होता है। बच्चों की व्यस्त जीवनशैली और समय का अभाव वृद्धों के साथ संवाद का अवकाश छीन लेती है। वृद्ध अब परिवार में स्वयं को उपेक्षित और परित्यक्त पाते हैं। संयुक्त परिवारों में वृद्धों को परंपरागत रूप से सम्मान और परामर्शदाता की भूमिका प्राप्त होती थी। उनकी उपस्थिति कभी परिवार को एकजुट रखने का सूत्र देती थी, किंतु आधुनिकता और पीढ़ीगत अंतराल ने इस संरचना में भी दरारें डाल दी हैं। आंतरिक खींचतान और बदलते मानवीय मूल्यों ने वृद्धों को उपेक्षित कर दिया हैं, जिससे उनका मन उदासीनता की गहराइयों में डूब जाता है। वृद्धावस्था के समय अनेक शारीरिक अक्षमताएँ होने लगती है, जैसे शरीर में कमजोरी, सुनाई कम देना, दिखायी कम देना, स्मृति धुंधली होने लग जाती है। साथ ही भूख तथा नींद संबंधित बीमारियाँ भी होने लग जाती है। डोभाल जी की कहानी 'पलकों पर बसा था गाँव' कथाकार अपने दादा की अवस्था के विषय में बताते हैं- "ददा उसी अवस्था से गुजर रहे हैं। कहते हैं, कफ-बलगम बढ़ गया है, आँखों से भी दिखाई नहीं देता, दिन-दिन काया क्षीण होती जा रही है।"[8]

नौकरीपेशा परिवारों में समय की कमी और आधुनिक जीवनशैली का दबाव वृद्धों को 'बोझ' के रूप में चित्रित करता दिखायी देता है। शहरों में स्थान की तंगी और जीवनशैली का अंतर उन्हें परिवार से काट देता है। कई बार उन्हें वृद्धाश्रम की राह दिखाई जाती है, जो उनके हृदय को गहरे आघात पहुँचाने का कार्य करता है। संसाधनों की कमी और स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव उनके जीवन को और कष्टप्रद बनाता जाता है। कभी उनकी उपस्थिति परिवार की नींव को मजबूती देती रही थी, परंतु एकाकी परिवार की भावना व आर्थिक तंगी ने उनके जीवन को दुरुह बना दिया है। डोभाल जी की कहानी 'उतरा हुआ' में चरनी नामक पात्र की वृद्ध माँ की शारीरिक दुर्दशा का उल्लेख हुआ है। इस कहानी में कथाकार व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते हुए उल्लेख करते हैं- "भीतर कमरे में एक गर्म कोने में मैले-कुचैले चीथड़ों को रौंदता हुआ एक अस्थि-पँचर देख कर डर जाता हूँ। चरनी की माँ घुरती हुई नजरों से मुझे देखती है। बार-बार सहम जाता हूँ। आदमी की यह दुर्गत.... चरनी ने भीतर आ कर अम्माँ को समझा दिया है कि मैं उससे ज्ञान-ध्यान और मुक्ति की बात कहने जा रहा हूँ आखरी वक्त है, जरा ध्यान से सुन लेना।"[9]

शहरी परिवारों में वृद्धों को आधुनिक जीवनशैली और तकनीकी के साथ तालमेल बिठाना कठिन पड़ता है। डिजिटल विभाजन और पीढ़ीगत अंतराल उन्हें परिवार और समाज से अलग-थलग कर देता है। उनकी आवाज़, जो कभी घर की शोभा थी, अब आधुनिकता के शोर में खो जाती है। डोभाल जी की कहानी 'जय जगदीश हरे' बुजुर्गों की इस तकनीकी युग में शांति की मांग को दर्शाती है– "घरों में बूढ़े लोग अक्सर बीमारी की हालत में पड़े रहते हैं, ऐसे में ध्वनि-प्रदूषण... यानी शोरगुल उन्हें पसंद नहीं। फिर बच्चों की पढ़ाई-लिखाई का मामला है। दिन भर की चख-चख के बाद शाम को घड़ी-घंटा आदमी शांति से बैठना चाहे तो वह सब नहीं हो पाता।"[10]

शिक्षित परिवारों में वृद्धों को अपेक्षाकृत अधिक सम्मान और देखभाल प्राप्त होता है, विशेषकर जहाँ सामाजिक मूल्य अभी भी जीवंत हैं। किंतु, तर्क और आधुनिकता का बोलबाला कई बार भावनात्मक संबंधों को कमजोर कर देता है। वृद्धों की भावनाएँ तर्क की कसौटी पर तोली जाने लगती हैं, अशिक्षित परिवारों में आर्थिक अस्थिरता और सामाजिक पिछड़ेपन के कारण वृद्धों की देखभाल के प्रति सजगता कम होती है। अंधविश्वास, रुढ़ियाँ और अमानवीय बर्ताव उनकी पीड़ा को और गहरा देती हैं। उनकी स्थिति जो सम्मान की हकदार थी, अब उपेक्षा और अज्ञानता की भेंट चढ़ जाती है। डोभाल जी की कहानी 'अंधेरे का स्वर्ग' में परिवार की संवेदनहीनता व स्वार्थलिप्तता को अभिव्यक्त करती दिखायी देती हैं। इस कहानी में वृद्ध व्यक्ति को स्वर्ग पहुँचाने में परिवार के सभी व्यक्तियों की भूमिका पर कथाकार व्यंग्यात्मक ढंग से उल्लेखित करते हुए लिखते हैं- "पड़ोस की ताई ने अपना ज्ञान सुनाया। उसका कहना था कि मरने वाले के प्राण यदि आँखों के रास्ते निकलते हैं तो वह प्राणी सीधे स्वर्ग जाता है। बाबा को स्वर्ग मिले, यह कामना सबके मन में घर कर गयी। किंतु चाचा से जरा भी सब्र न हुआ। वे बाबा को जल्द से जल्द स्वर्ग भेज देना चाहते थे, इसलिए मुँह पर गंगाजल छिड़ककर चाचा ने नाक सहित उनके मुँह को हथेली से दबा दिया, ताकि नाक-मुख से उनके प्राण न निकल जाएं।दूसरे लोग बाबा के हाथ-पैर दबाकर बैठ गये। बगल में बूढ़ा ताऊ जोर-जोर से गीता-पाठ करने लगा। सब लोग चुपचाप इस दृश्य को देखते रहे। उधर सांस घुट जाने पर बाबा के ढीले शरीर में यकायक जोर आ गया। वे अपनी पूरी ताकत से इन बंधनों से मुक्त होने का प्रयास करने लगे उनकी दुर्बल-काया झटके से उछलती फिर शिथिल पड़ जाती।"[11]

इसी प्रकार की कहानी 'कटा हुआ पेड़' भी है, जिसमें वृद्ध दादी काटे गये उस विशालकाय वृक्ष की कहानी बयाँ करती है। जिसमें पति विरह में पेड़ पर रस्सी लगा कर मरने वाली कई स्त्रीयों की करुण गाथा वर्णित है। इसलिए दादी उसे गाँव के लिए अशुभ कहकर उसे काटे जाने की बात कहती है। दादी लेखक से कहती हैं कि- "तुम उसके कटने का कारण जानना चाहोगे। तब गाँव की कोई दादी चुपके से तुम्हारे कान मे कहेगी कि वह पेड़ अशुभ हो चुका था। गाँव के हक में वह अच्छा नहीं था। उसकी एक शाख पर तुम्हारी सीता ने गले में रस्सी बाँध ली थी।"[12] इस कहानी में बुजुर्ग महिला का गाँव के सुनहरे दिनों की याद के साथ वर्तमान के गहरे अंधकार को दिखाया गया है।

निष्कर्ष

वृद्धावस्था जीवन की वह संध्या है, जो अनुभव, प्रज्ञा और प्रेम से युक्त होता है, किंतु आधुनिक समाज की आपाधापी और मूल्यों के विघटन ने इस जीवन को उपेक्षा की स्याही से धूमिल कर दिया है। वृद्धों की स्थिति, चाहे वह ग्रामीण परिवेश हो या शहरी, एकल परिवार हो या संयुक्त, चिंताजनक है। आवश्यकता इस बात की है कि वृद्धों को केवल अनुभवों का भंडार ही न माने जाएं, बल्कि उन्हें जीवन के एक पूर्ण और सम्मानित मानव के रूप में स्वीकार करें। परिवार, समाज और शासन को समन्वित रूप से उनके अधिकारों, सम्मान और सुरक्षा के लिए उचित कार्य करना होगा, ताकि उनकी जीवन की सांध्य-बेला सूर्यास्त की उदासी न बनकर भावी जीवन के लिए आशा बन सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. डोभाल, बल्लभ : वही एक अंत, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ०126
2. दर्पण, महेश : उत्तराखंड के कथा शिल्पी बल्लभ डोभाल, काव्यांश प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2023, पृ० 27
3. डोभाल, बल्लभ: वही एक अंत, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० (78)
4. डोभाल, बल्लभ :अंतिम आवाज, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1985, पृ० 25
5. डोभाल, बल्लभ: अंतिम आवाज, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1985,पृ० 33
6. डोभाल, बल्लभ अंतिम आवाज, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1985,पृ० 99

7. डोभाल, बल्लभ,तन का देश मन का देश, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1984,पृ० 25
8. डोभाल, बल्लभ, आधी रात का सफर, सत्साहित्य प्रकाशन दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2004,पृ०26
9. डोभाल, बल्लभ: वही एक अंत, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002 , पृ० 113
10. डोभाल, बल्लभ : वही एक अंत, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० 21
11. डोभाल, बल्लभ : वही एक अंत, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० 200-201
12. डोभाल, बल्लभ : अंतिम आवाज, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1985,पृ० 138